International Journal of Applied Research 2018; 4(3): 271-272

ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 5.2
IJAR 2018; 4(3): 271-272
www.allresearchjournal.com
Received: 18-01-2018
Accepted: 22-02-2018

दुर्गानन्द यादव
शोधार्थी, ल.ना.मि.विश्वविद्यालय, दरभंगा, बिहार, भारत

Corresponding Author:
दुर्गानन्द यादव
शोधार्थी, ल.ना.मि.विश्वविद्यालय, दरभंगा, बिहार, भारत

विद्यापति के भक्ति काव्य में सामाजिक चेतना

दुर्गानन्द यादवे

सारांश
विद्यापति मैथिल कवि थे और मिथिला के रहने वाले थे। मैथिली मागधी प्राकृत से निकली होने के कारण हिन्दी का अंग न होकर बिहारी भाषा के अन्तर्गत आती है। विद्यापति अपनी कोमल कान्त पदावली के कारण ''मैथिल कोकिल'' के नाम से पुकारे जाते हैं, और मिथिला निवासियों को इन पर गर्व है।

प्रस्तावना
कबीर की तरह विद्यापति ने समाज की रूढियों के विरुद्ध तो अपना रोष व्यक्त नहीं किया और तुलसी जैसे भक्त कवियों की भाँति समाज के कल्याण को अपने काव्य का विषय बनाया। यथास्थान उनके काव्य में सामाजिक चेतना की अभिव्यक्ति हुई है। उनके काव्य की जीवंतता का श्रेय हम इन्हीं सामाजिक सचेतनता को दे सकते हैं। विद्यापति ने सर्वप्रथम जन–सुलभ भाषा में समग्र जीवन को अपनी कृति में अभिव्यंजित किया है। जो साहित्य जन–जीवन को प्रभावित नहीं कर सकेगा एवं जो जन–साधारण द्वारा पठनीय नहीं होगा वह अत्युत्कृष्ट होने पर भी जनप्रियता के गौरव से वंचित ही रहेगा।
विद्यापति ने प्रायः सभी पक्षों पर दृष्टि डाली है, उन सबसे उनकी सामाजिक– चेतना अभिव्यंजित हुई है। कवि की विरहिणी नायिका विरहाधिक्य के कारण आत्महत्या अथवा पलायन की बात नहीं करती है। जब वह अत्यधिक व्याकुल होती है, तभी विद्यापति उसको प्रिय– मिलन के प्रति आश्वस्त करते हुए देखे जाते हैं। जब दग्धा नायिका कहती है।

''सून रोज मोहि सालए रे। पिया बिनु धर गोए आजि।
विनती करो सहलालनि रे। मोहि देह अगिहर, साजि।''

इसी समय कवि विद्यापति उसकी सखी से यह कह देते हैं कि–

''विद्यापति कवि गाओल रे! आई मिलवे प्रिय तौर।''

विरहिणी के अनिष्ट की बात सोचने से पूर्व ही सखी के मुख से, पथिक के मुख से अथवा स्वयं अपने मुख से आश्वासन के दो शब्द कहकर नायिका को आशा बँधा देते हैं। विद्यापति की नायिका सामान्य कुल की स्त्री है, जिसके चारों ओर परिवार और समाज की बाढ़ दिखाई देती है। उसकी सास–ननद आदि चौकसी करती है, कुल–शील की मर्यादाएँ समाज की मान्यताएँ आदि उसके मार्ग की बाधाएँ हैं। ऐसी अवस्था में विद्यापति ने परकिया आदि के जो वर्णन किए हैं, वे एक सामान्य नारी को। लक्ष्य करके लिखे गए हैं। उनकी नायिका कहीं भी रानी या राजकुमारी के रूप में नहीं दिखाई देती है। विद्यापति ने विरहिणी की एक–एक दशा को बहत करीब से देखा था, अतएव उन्होंने जो कुछ भी विरह–वर्णन के अन्तर्गत लिखा, उस पर समाज की गहरी छाप है–

''माघ मास धन पडए/झिलमिल कुचुआँ उनत धन हार।
पुनमति सूतलि पिअत कोर/विधि बस दैव वाम भेल मोर।''

प्रकति वर्णन के संदर्भ में भी कवि की सामाजिक–चेतना की झलक देखी जा सकती है। आलंबन–रूप में किए गए वर्णन में कई स्थलों पर मानवीकरण की पद्धत्ति अपनाई गई है। सांगरूपक के सहारे प्रकृति के विभिन्न उपकरणों का बहुत ही सूक्ष्म और बिम्बग्राही वर्णन हुआ है। कहीं तो बसंत का वर्णन बालक, तरूण, दूल्हा, राजा आदि रूपों में रखकर किया गया है तो कहीं आगन्तुकों को आसन देना, मांगलिक कमल की स्थापना करना, जल से प्रक्षालन करना, दीप

जलाना, दही, दूर्वा, अक्षत, सिन्दूर वस्त्र आदि चढ़ाना सभी कुछ वर्णित है–

''अभिनव पल्लव बइसक देल।
धवल कमल फूल पुरहल भेल।
करू मकरन्द मंदाकिनी पान।
अरूण असोक दीप बहु आन।।
माह रे आज दिवस पुनुमंत ।
करिअ चुमावन राय बसंत।।''

कवि ने समाज के कई परिवेशों का यथार्थवादी वर्णन किया है। समाज में प्रचलित बाल–विवाह, बेमेल विवाह आदि कुरीतियों पर तीखे प्रहार एवं व्यंग्य किए हैं। समाज की रूढ़ियों की उपहास भी काव्योचित शैली में किया हैं। एक तरूणी का विवाह बालक पति के साथ हो गया। चलाक पति पाकर बेचारी पत्नी के तो भाग ही फूट गए। उसकी यह मनोदशा उसकी जवानी विद्यापति ने कहलाई–

''पिया मोर बालक हम तरुणी।
कोन तप चुकल भेलउँ जननी
पहुँ लेल कोरा चलल बजार,
हटिया के लोग पुछू के लागु तौहार।
पहिरल सखि एक दछिनक चीर।
पिया के देखइत भेल दगध सरीर।''

यौवन नायिका अपने बात से इस दुधमुँहे के साथ मेरा विवाह तो आपने कर दिया अब अपने इस जमाई के दूध पीने को गाय भिजवा दो जिससे तुम्हारा जमाई पुष्ट हो जाए– इस प्रकार के व्यंग्य विद्यापति के काव्य में भरे पड़े हैं। इनसे उस समय के समाज पर अच्छा प्रकाश पड़ता है।

इतना ही नही कुटनी नारी का सौ फीसदी यथार्थवादी वर्णन किया है। कुटनी औरतें न केवल परनारियों को भोली–भाली कुल स्त्रियों को लोभ देकर फँसाती थी, बल्कि स्वयं भी एक प्रकार से वेश्या का जीवन व्यतीत करती थीं। ये दूती कुटनी नारियों प्रेमी प्रेमिकाओं के स्वाभाविक प्रेम व्यापार में सहायता देने के अलावा नागरिकों को काम वासना की तृप्ति के साधन उपलब्ध करती थीं। ऐसी नारियाँ सम्पूर्ण जीवन को अनेक प्रकार के छल–छद्म और कुत्सा भरे व्यवसाय में व्यतीत करती हैं और वृद्धावस्था में निराशा से भर जाती है; यथा–

''खने खस घोघट विघट समाज
खने–खन अब हकारलि लाज।''

कुटनी पश्चाताप और आत्मा–ग्लानि व्यक्त करती है। कवि उसके प्रति अपनी सच्ची सहानुभूति व्यक्त करती है। कुटनी का कथन सच्ची संवेदना वाले कवि हृदय से ही निकल सकता है–

''परमाद धिया मोर भेला।
आहे यौवन कत चल गेल।।''

विद्यापति के काव्य के नायक नन्दराज के राज कुमार न होकर एक ग्वाले के रूप में चित्रित किए गए हैं। राधा व्यंग्य करती हुई कहती है कि कृष्ण कितने मूर्ख हैं, जो बडे मनसूबे बाँधते हैं। कहीं कौड़ी से घोड़ा खरीदा जाता है अथवा उधार माँगने से घी मिलता है। कृष्ण आकर पाँव के पास प्याले पर बैठ जाते हैं और पूछने लगते हैं, कहाँ है शय्या? चटाई फटी है। बैठने को पलंग नहीं खोजते हैं– इस प्रकार कृष्ण एक सामान्य गरीब ग्वाले के रूप में उपस्थित होते हैं। इसका एक मनोहरी चित्र हम इस प्रकार देख सकते हैं–

कि कहब आज कि बैठक।
अपदहिं कान्हक गौरव गेलि।
आयल बैराल पाँव पोआर।
रोचक कहिनी पूछए विचार।
ओछाओन खण्डतरि पलि चाह।
आओर कहब कत अहिरनि नाह।

विद्यापति के गीतों में कई स्थानों पर प्रेम–विरह आदि की सूक्ष्म परिस्थितियों में लोक–प्रचलित अंधविश्वास, भूत प्रेत, टोना टोटका एवं अनेक रूढ़ विश्वासों के उल्लेख मिल जाते हैं, साथ ही उनके कई पदों में समाज के अस्वस्थ एवं अनैतिक स्वरूप का चित्रण पाया जाता है। ये वर्णन समाज की मनोवृत्तियों का यथार्थ रूप प्रस्तुत करते हैं।

विद्यापति की भाषा में अनेक ग्राम्य एवं लोक–प्रसूत प्रयोग मिलते हैं। इनको देखकर यह सहज ही अनुमान किया जा सकता है कि लोक–जीवन में विद्यापति की पैठ कितनी गहरी थी। लोक जीवन में विशेषकर नारी वर्ग में प्रचलित मुहावरों और कहावतों के प्रयोग में विद्यापति ने कमाल ही कर दिया है–

पीतल का टाँड (आभूषण) और ऊपर सोने का मुलम्मा। इस चमक–दमक से कोई काम करने वाला नहीं।

समग्रतः विद्यापति ने अपने काव्य में समाज में अपने युग के समाज और जनजीवन के अनेक यथार्थ और सजीव चित्र प्रस्तुत किए हैं। स्पष्ट है कि वह अपने समाज के प्रति पूर्णतः जागरूक थे। भले ही वह दरबारी कवि थे। परन्तु सामाजिक परिवेश उनकी दृष्टि से एक पल को भी ओझल नहीं होता था। यह समझना सरासर गलत है कि विद्यापति किसी लता पुंज में बिहार करने वाले या मात्र दरबार के वातावरण में घिरे हुए कवि थे। विद्यापति दरबारी कवि अवश्य थे, परन्तु वह अपने चारों तरफ के वातावरण के प्रति पूर्णतः जागरूक थे।

संदर्भ

1. विद्यापति (रगानाथ झा) साहित्य अकादमी, नई दिल्ली
2. विद्यापति और उनकी पदावली– सं. कृष्णदेव शर्मा, अशोक प्रकाशन, नई दिल्ली
3. विश्वकवि विद्यापति–लेखक सीताराम झा 'श्याम' प्रकाशक, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार